

माली सींचे मूल को 5 मन का प्रबन्धन

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती
तीसरी पीढ़ी



योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

मन का प्रबन्धन

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती
तीसरी पीढ़ी



योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

मन का प्रबन्धन

योग के द्वारा हम मनुष्य बनने का प्रयास करते हैं। योग का उद्देश्य समाधि अथवा आत्मा-साक्षात्कार नहीं है। जीवन का उद्देश्य सामंजस्य है और सामंजस्य के द्वारा हम पूर्ण मानव बनते हैं। सामंजस्य न होने के कारण हम केवल प्रतिक्रिया करते हैं और जब हम प्रतिक्रिया करते हैं तो यह मात्र पशु जैसा आचरण होता है। यह बात याद रखिए कि अभी जो हमारे पास है उससे कहीं अधिक सम्पत्ति जीवन हमें दे सकता है। मनुष्य की सच्ची सम्पत्ति बैंक-बेलेंस या जमीन-जायदाद नहीं है। मनुष्य की वास्तविक सम्पत्ति एक सम्पूर्ण मानव होना है, एक ऐसा मानव जिसके भीतर शान्ति हो और बाह्य जगत् के साथ सामंजस्य। योग की शुरुआत मन का प्रबन्धन सीखने से होती है। अनुशासन, सजगता तथा स्वयं की समझ द्वारा आप अपने मन को दिशा दे सकते हैं, उसमें सामंजस्य ला सकते हैं, उसका प्रबन्धन कर सकते हैं। आप मन की प्रसुप्त प्रतिभा को जगा सकते हैं।

भविष्य का जो योग होगा वह हठयोग या राजयोग नहीं होगा। भावी योग द्वारा मानव मन का अन्वेषण और व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों का प्रबन्धन होगा ताकि आन्तरिक सामंजस्य का अनुभव हो सके। मानवीय गुण तभी प्रकट होते हैं जब हमारे भीतर शान्ति और सामंजस्य की अवस्था होती है। यह सामंजस्य फिर बाहर प्रक्षेपित होता है। व्यक्तिगत अनुभव बाद में एक सामाजिक अनुभव का रूप लेता है, एक सकारात्मक सामाजिक वातावरण का निर्माण करता है। इस प्रकार व्यक्तिगत और सामाजिक स्तर पर गुणात्मक परिवर्तन लाना सम्भव हो पाता है। यही योग का हमेशा से मुख्य प्रयोजन रहा है।

आधुनिक मनोविज्ञान के अनुसार मन के चेतन, अवचेतन और अचेतन स्तर होते हैं। योग के मतानुसार मन की जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्त अवस्था होती है। जाग्रत अवस्था का चेतन मन से, स्वप्न अवस्था का अवचेतन मन से और सुषुप्त अवस्था का अचेतन मन से सम्बन्ध है। योग के अनुसार मन की एक और उच्च अवस्था है, तुरीयावस्था जहाँ मनस्, बुद्धि, चित्त और अहंकार जैसे मन के विभिन्न आयामों में कोई अन्तर नहीं रहता। जब हम योग में मन की चर्चा करते हैं तो हमेशा मन की चेतन, अवचेतन और अचेतन अवस्थाओं के परिप्रेक्ष्य में करते हैं।

सामंजस्य की अभिव्यक्ति

हम मनुष्य दुर्बल और कमजोर प्राणी हैं। जीवन में जिस नकारात्मकता और सकारात्मकता का हम सामना करते हैं उससे प्रभावित हो जाते हैं और हमारी प्रतिक्रियाएँ उन प्रभावों से नियंत्रित होती हैं। हमारा मौलिक स्वभाव आखिर कहाँ है? हम कौन हैं, हम क्या बन जाते हैं और दूसरे लोग हम पर क्या छवि आरोपित करते हैं, इसके प्रति हम सजग नहीं हैं। यहीं पर ध्यान उपयोगी होता है। इससे हमें अपने व्यक्तिगत स्वभाव को जानकर और अपने व्यक्तित्व की कमजोरियों को दूर कर आन्तरिक विकास अनुभव करने का मौका मिलता है।

चित्त, अहंकार अथवा बुद्धि किस प्रकार कार्य करते हैं, इसकी दार्शनिक स्तर पर चर्चा करने से कोई लाभ नहीं। वे अपना कार्य करते हैं, इतना जानना पर्याप्त है, परन्तु अपने जीवन में सुधार लाने के लिए जीवन की परिस्थितियों से जूझने की क्षमता हम में होनी चाहिए। अपने व्यक्तित्व, अपने चरित्र और अपने सामर्थ्यों, कमजोरियों, महत्वाकांक्षाओं एवं आवश्यकताओं को जानने के लिए ध्यान को आधार बनाया जाता है। अपने व्यक्तित्व के इन चार क्षेत्रों को जानने को 'स्वान सिद्धान्त' के नाम से जाना जाता है।

इस नई जानकारी के साथ हम हर दिन सबेरे संकल्प सहित मंत्र के प्रयोग द्वारा और शाम को ज्ञानयोग के एक अभ्यास द्वारा दिनभर की घटनाओं की समीक्षा करके अपने अन्तर्मन में सामंजस्य ला सकते हैं।

आसन, प्राणायाम और योगनिद्रा के साथ संयुक्त होकर ये विधियाँ सजगता का विकास करेंगी और जीवन में हमारी भागीदारी सामंजस्यपूर्ण



तथा रचनात्मक होगी। आप एक संतुलित व्यक्ति के रूप में जाने जायेंगे। यह आपका एक बहुत बड़ा गुण होगा, क्योंकि इसका मतलब है कि आपके जीवन में सामंजस्य और समन्वय विकसित हो रहा है। अपने जीवन और विश्व को सुन्दर बनाने के लिए यही तो आपको चाहिए।

जब आप इन प्रक्रियाओं से गुजरते हैं तब आपको मालूम पड़ता है कि आपकी आदतें, आपकी जीवनशैली बदल रही है। आपको यह भी पता चलता है कि आपकी अवधारणाएँ और दृष्टिकोण बदल गये हैं, और

सम्पूर्णता की अनुभूति होती है। पूर्णता की इस अनुभूति के साथ योग की यात्रा आरम्भ होती है। आप आगे बढ़ते हुए अपने जीवन का विकास और संवर्द्धन अनुभव करते हैं।

पुनर्शिक्षण द्वारा दृष्टिकोण में परिवर्तन

योग अन्य मान्यताओं, संस्कृतियों अथवा मानसिकताओं को बदलने की प्रणाली कभी नहीं रही। वास्तव में श्री स्वामीजी योग को आपातकालीन दवा कहते हैं। जब आपको हृदयाघात होता है तो आप तब तक अस्पताल में रहते हैं जब तक आप दूसरे उपचार के लिए कुछ हद तक ठीक नहीं हो जाते। इसी प्रकार, जब मन का हास होता है, जब मन की नैसर्गिक क्षमताएँ दमित होती हैं, जब आप जीवन की परिस्थितियों से जूझने में असमर्थ होते हैं, तब योग एक आपातकालीन दवा के रूप में सामने आता है। जब तक आप जीवन एवं स्वयं के प्रति एक उच्च दृष्टिकोण का विकास नहीं कर लेते, तब तक इस आपातकालीन दवा के सहारे आप परिस्थितियों का सामना कर पाएँगे। फिर आप संयम, अनुशासन और सजगता के साथ सामान्य जीवन व्यतीत कर सकते हैं।

जब लोग संतुलन प्राप्त कर लेंगे तब योग एक बार फिर पृष्ठभूमि में चला जाएगा। सन्तुलित अवस्था में अन्य गुणों की अभिव्यक्ति होगी और हम कुछ समय तक चेतना के उस स्तर पर चलेंगे। इस बीच ऋषि-मनीषी योग को सजीव और सुरक्षित रखेंगे। परिस्थितियाँ बदलती हैं, वातावरण परिवर्तित होता है। जब हमें दुबारा महसूस होगा कि जीवन में बाधा आ रही है और हम सृजनात्मक ढंग से अपने व्यक्तित्व और स्वभाव को व्यक्त नहीं कर पा रहे हैं तब हम वापस योग की ओर आयेंगे।

बाह्य परिस्थितियों में सुधार लाने के लिए पहले हमें अपनी आन्तरिक अवस्थाओं में सुधार लाने की आवश्यकता है। मानव स्वभाव में अनेक मौलिक गुण होते हैं, जिनमें से तीन महत्वपूर्ण हैं – सृजनात्मकता, उदारता और संतुलन। ये नींव के पत्थर हैं जिन पर जीवन के भवन का निर्माण किया जाता है। हमें स्वयं को पुनर्शिक्षित करके, अपनी शिक्षा में आत्म-ज्ञान और आत्मानुशासन की अवधारणा का समायोजन करके अपने दृष्टिकोण को बदलना होगा। शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन होना चाहिए, क्योंकि यह न

केवल हमारे कार्य करने के ढंग को प्रभावित करती है, बल्कि उन आवश्यक संस्कारों का सृजन भी करती है जिनसे हमारी बाह्य अभिव्यक्तियाँ निर्देशित होती हैं।

‘माली सींचे मूल को’ नामक शृंखला में एकत्र ये समन्वित साधनाएँ उस शिक्षा का भाग हैं जिसे आप आज से आरम्भ कर सकते हैं। यदि आप आत्म-सजगता तथा जीवन को सामंजस्यपूर्ण ढंग से जीने की क्षमता का तीव्रगति से विकास करना चाहते हैं तो कैप्सूल साधना, स्वान सिद्धान्त और आध्यात्मिक डायरी को अपने जीवन में आज से अपनाइये।

आध्यात्मिक यात्रा आपके लिए आवश्यक है ताकि आप अपनी पूर्ण क्षमता को पहचान सकें, अपने दृष्टिकोण को बदल सकें और अपने मन को सुव्यवस्थित करके सामंजस्यपूर्ण जीवन जी सकें।

माली सींचे मूल को

एक बार, जब मैं छोटा था, श्री स्वामीजी को कुछ समय के लिए आश्रम के बाहर जाना था। उन्हें पेड़-पौधों से बहुत प्रेम था। आश्रम में एक बहुत सुन्दर बगीचा था जिसमें बहुत प्रकार के फल-फूल वाले पेड़-पौधे थे। हालाँकि मैं बहुत छोटा था लेकिन पौधों की देख-भाल में मदद करता था। चूँकि उन्हें कुछ दिनों के लिए बाहर जाना था, इसलिए उन्होंने मुझसे इन पौधों की अच्छी तरह देख-भाल करने को कहा। मैंने उन्हें आश्वासन दिया और वे मुझे पर विश्वास करके यात्रा पर निकल गये।

जब वे एक सप्ताह बाद लौटे तो उन्होंने पाया कि अधिकांश पौधे मुरझाये हुए लग रहे थे। उन्होंने मुझे बुलाया और पूछा, ‘तुमने पौधों का ख्याल नहीं रखा क्या?’ मैंने कहा, ‘जी हाँ, मैंने हर तरह से उनका ध्यान रखा ताकि वे हरे-भरे रहें। उन्होंने पूछा, ‘तुमने उनकी देखभाल कैसे की?’ मैंने कहा, ‘मैं रोज सबेरे पत्तों और फूलों



को कपड़े से पौछता था। अगर कोई कीड़ा दिखता तो उसे हटा देता था। मैंने वास्तव में बहुत मेहनत की है। मैंने पत्तों, पंखुड़ियों और तनों से धूल झाड़ी, पर मालूम नहीं वे इतने मुरझाये हुए क्यों दिख रहे हैं। हो सकता है वे मुझे पसन्द नहीं करते।' उन्होंने पूछा, 'क्या तुमने उन्हें पानी दिया, उनकी जड़ों को सींचा?' मैंने कहा, 'वह तो मैं भूल गया।' उन्होंने कहा –

एक साधे तो सब सधे, सब साधे सब जाय।

माली सींचे मूल को, तो फूले फले अघाय॥

तब उन्होंने मुझे समझाया कि यह दृष्टान्त हमारे जीवन से भी सम्बन्धित है। हम अपने बाह्य विकास का ख्याल रखते हैं, परन्तु अपने आन्तरिक विकास पर ध्यान नहीं देते। शरीर के रूप में जो बाहरी पौधा है, उसकी तो हम अलग-अलग तरीकों से बहुत देखभाल करते हैं, लेकिन पौधे की जड़ों को, जो मन की गहराइयों तक फैली हुई हैं, शायद ही कभी देखते हैं।

हमारे जीवन में पेड़ या पौधा शरीर का प्रतीक है जिसके द्वारा हम संसार में अपनी सभी क्रियाओं और इन्द्रियों की क्षमताओं को अभिव्यक्त करते हैं। पेड़ के फल-फूल इन्द्रियों और शरीर द्वारा की गई क्रियाओं के परिणाम हैं। हम अपने व्यक्तित्व के इसी भाग से जुड़े रहते हैं जो सतह के ऊपर है और इसी को सुधारने-चमकाने में लगे रहते हैं। हम जमीन के ऊपर वाले पेड़ यानि अपने शरीर को स्वस्थ रखने का प्रयास तो करते हैं, लेकिन पेड़ की जड़ यानि मन जो सतह के भीतर है और जिससे हमें पोषण तथा बल मिलता है, उसे कभी-कभार ही सींचते हैं। जल के अभाव में हमारा जीवन कमजोर हो जाता है।

इस पौधे रूपी जीवन को जो पानी दिया जाना चाहिए वह सुख या आराम नहीं, बल्कि आध्यात्मिक सजगता है। यही आध्यात्मिक सजगता जीवन को स्वस्थ बनाये रखती है। यह मात्र मेरा ही कथन नहीं, सभी युगों में साधु-सन्तों ने ऐसा कहा है, परन्तु अभी तक हमने इस विचार को अपने जीवन में नहीं उतारा है। कारण जो भी हो, हम अभी भी स्वयं को बाह्य, भौतिक अनुभवों और क्रियाओं में लिप्त पाते हैं। लेकिन ऐसी कुछ विचारधाराएँ रही हैं जिन्होंने इस बात पर बल दिया है कि मनुष्य को अपनी आन्तरिक चेतना के विभिन्न स्तरों का ख्याल करना चाहिए ताकि जो जड़ें सतह के नीचे फैली हुई हैं, उनकी भी देख-भाल हो। यही वास्तविक आध्यात्मिकता है – एक ही साथ

व्यक्त और अव्यक्त को सम्भालने की क्षमता। आध्यात्मिकता का आरम्भ अपनी आन्तरिक क्षमता को पहचानने और समझने के प्रयास से ही होता है।

हम अपना विकास कैसे कर सकते हैं?

जाने-अनजाने हमारा विकास निरन्तर हो रहा है। जैसे हम जन्म से लेकर मृत्यु तक शरीर के विकास और क्षय को नहीं रोक सकते उसी प्रकार चेतना के विकास की प्रक्रिया को नहीं रोक सकते। योगियों का विश्वास रहा है कि सजगता द्वारा हम विकास की इस प्रक्रिया को तीव्र कर सकते हैं, और उस स्तर तक पहुँच सकते हैं जहाँ मानव व्यक्तित्व की क्षमताओं का अधिकतम उपयोग हो सके। मानव विकास की इस यात्रा का लक्ष्य पूर्णता को प्राप्त करना है।

योग शब्द का अर्थ है मिलन और दार्शनिक रूप से हम कह सकते हैं कि यह व्यक्तिगत चेतना का सर्वोच्च चेतना के साथ मिलन है, परन्तु यह लक्ष्य हमारी पहुँच के बाहर है। हमें भौतिक स्तर पर मिलन और संयोजन के अनुभव से शुरुआत करनी होगी – शारीरिक सामंजस्य की प्राप्ति, शरीर और मस्तिष्क की क्षमताओं का संयोजन, मस्तिष्क और मन की प्रतिभाओं का संयोजन, मन और आत्मा की क्षमताओं का संयोजन।

हमें क्रमबद्ध ढंग से बढ़ना है और विभिन्न स्तरों पर संयोजन को अनुभव करना है। इसलिए विभिन्न योग प्रणालियों का विकास हुआ है जिनमें से कुछ का सम्बन्ध शरीर से है, तो कुछ का सम्बन्ध प्राण, मन अथवा अध्यात्म से। जब योग की विभिन्न विधियों द्वारा हमारा विकास होता है तथा शरीर और मन के विभिन्न स्तरों में सामंजस्य आता है, तब हम एक ऐसे बिन्दु पर पहुँचते हैं जहाँ हमारे दृष्टिकोण, कर्म और व्यवहार का रूपान्तरण होता है।

स्वयं को व्यवस्थित करना

योग प्रबन्धन की प्रक्रिया है – शरीर, मन, भावनाओं और आत्मा की विभिन्न अवस्थाओं का प्रबन्धन, इससे अधिक कुछ नहीं। जैसे ही हम अपने व्यक्तित्व के इन विभिन्न आयामों को व्यवस्थित करने में सक्षम हो जाते हैं, हम स्वयं को योग में स्थापित कर लेते हैं। प्रबन्धन की यह प्रक्रिया शरीर से आरम्भ होती है।

शरीर की कुछ सीमाएँ होती हैं जिनको कड़ेपन या दर्द के रूप में अनुभव किया जाता है, और उनका प्रबन्धन आवश्यक है। प्रबन्धन की इस प्रक्रिया का अच्छा उदाहरण महर्षि पतंजलि के योग सूत्रों में है जहाँ वे *स्थिरसुखमासनम्* की परिभाषा देते हैं। वह स्थिति जिसमें व्यक्ति स्थिर और सुखपूर्वक रहे, यह आसन की अन्तिम परिभाषा है, परन्तु इस स्थिति तक आने के लिये व्यक्ति को अभ्यास की प्रक्रिया से गुजरना होता है। शरीर की विभिन्न अवस्थाओं को कैसे व्यवस्थित किया जाता है, इसे सीखना ही अभ्यास की प्रक्रिया है।

मन के प्रबन्धन में भी ऐसा ही होता है। मन की सर्वोत्तम अवस्था एकाग्रचित्त होती है, जहाँ कोई विक्षेप या विकर्षण नहीं होता, जहाँ पर संकल्प शक्ति का केन्द्रीकरण होता है। यह संकल्प शक्ति का नकारात्मक स्वरूप नहीं है जिसमें कठोरता हो सकती है, 'जो मैं कह रहा हूँ वही सही है और मैं किसी दूसरी चीज में विश्वास नहीं करता।' नहीं, यह वैसा नहीं है। एकाग्र अवस्था में मन की शक्तियाँ लेज़र किरण की तरह बन जाती हैं जो लोहे में छेद कर सकती है या मानव शरीर में सूक्ष्म शल्यक्रिया कर सकती है। मन की शक्ति इतनी तीक्ष्ण होनी चाहिए कि यह वहीं जाए जहाँ इसे निर्देशित किया जाए।

इस अवस्था तक आने के लिए अभ्यास की प्रक्रिया से गुजरना जरूरी है, जो योग में योगनिद्रा और अन्तर्मौन जैसे प्रत्याहार के अभ्यासों द्वारा निर्देशित है। इससे धारणा की स्थिति आती है, जीवन में भक्ति, कर्म और ज्ञान की अभिव्यक्ति होती है।

समाधि की अभिव्यक्ति

अपने प्रबन्धन के इन विभिन्न चरणों से गुजरते हुए हम अन्ततः एक बिन्दु पर आते हैं जहाँ समाधि एक स्वाभिमुख प्रक्रिया नहीं, बल्कि एक सार्वभौमिक अनुभूति बन जाती है। मैंने अपने जीवन में गहराई से महसूस किया है कि यदि योग का उद्देश्य समाधि है जहाँ व्यक्ति संसार से अपने को अलग कर लेता है, तो मैं निश्चित रूप से ऐसे योग का अभ्यास नहीं करूँगा। मैं संसार से अपने को अलग कर लेने की प्रवृत्ति को स्वीकार नहीं कर सकता, क्योंकि यह एक स्वार्थपूर्ण प्रवृत्ति है, लेकिन अब मैं समझता हूँ कि समाधि वास्तव



में एक ऐसी अवस्था है जहाँ पर व्यक्ति और ब्रह्माण्ड के बीच एकत्व की अनुभूति होती है। उस एकत्व की अभिव्यक्ति निःस्वार्थता के रूप में होती है जो हमारे दृष्टिकोण, व्यवहार और दैनिक जीवन में परिलक्षित होती है।

जब हम स्वयं से यह पूछना आरम्भ करते हैं कि हम कौन हैं और हम यहाँ क्या कर रहे हैं तब योग का एक नया दृष्टिकोण उजागर होता है। यह प्रश्न आत्म-निरीक्षण और आत्मान्वेषण का तीव्र रूप लेता है।

मैं जब अमेरिका में था तो वहाँ एक व्यक्ति से मिला जो रमण महर्षि का अनुयायी था। उसने मुझसे कहा, ‘स्वामीजी, मैं रोज सबेरे नाश्ते के समय स्वयं से पूछता हूँ – मैं कौन हूँ? और इससे मैं पूरे दिन तृप्त रहता हूँ।’ इस प्रश्न के बारे में केवल थोड़ा-सा सोच लेना ही प्रयास नहीं। विचार और अनुभूति में तीव्रता होनी चाहिए। इसे अनुभव करने के लिए व्यक्ति को प्रयास करना चाहिए। योग की यही सुन्दरता है, इसमें उस समझ और अनुभव को जाग्रत करने के लिए स्वयं पर कार्य किया जाता है।

हमारा ऐसा अनुभव रहा है कि विश्व में योग की विविध प्रणालियों ने योग शिक्षा को शारीरिक समस्याओं के प्रबंधन तक सीमित रखा है। मन के प्रबंधन पर थोड़ा बहुत और आध्यात्मिक समझ विकसित करने पर तो

कुछ भी ध्यान नहीं दिया है। अब यह जरूर बदल रहा है। कई बार हमें लोगों के दो विपरीत समूह देखने को मिलते हैं। पहला समूह इतना अधिक आध्यात्मिक हो जाता है कि यथार्थता से सम्पर्क छूट जाता है और दूसरा समूह शरीर पर इतना केन्द्रित हो जाता है कि आन्तरिक अस्तित्व से कोई सम्पर्क नहीं रहता।

बुद्धि, भावना और कर्म

स्वामी सत्यानन्द जी हमेशा कहते थे कि मानव में बुद्धि, भावना और कर्म की प्रतिभाएँ होती हैं जिन्हें वह प्रतिदिन प्रयोग में लाता है। यदि हम केवल एक ही क्षमता को जागृत करने का प्रयास करते हैं तो विकास एकांगी होगा। बुद्धि, भावना और कर्म की प्रतिभाओं का समन्वित विकास करने के लिए अभ्यासों का एक अच्छा सम्मिश्रण होना चाहिए। हमें यह संकल्प लेना चाहिए कि हम अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व की देखभाल और विकास करेंगे।

हमें अपने पूरे अस्तित्व का ख्याल रखना है, केवल जो भाग बाहर दिखलाई देता है वही नहीं, बल्कि जो भाग अन्दर फैला हुआ है उसका भी और यह योगाभ्यास द्वारा सम्भव है। हमारा गहन आध्यात्मिक स्वरूप और स्वभाव ही हमारे जीवन की जड़ें हैं। इनकी देखभाल अपने जीवन में योग के एक संतुलित स्वरूप का समावेश करके ही हो सकती है। इसी सजगता के साथ हमें योगाभ्यासों की गहराई में उतरकर योग को समझना चाहिए। तभी हम अपने भीतर शान्ति का अनुभव कर सकते हैं।

स्वामी सत्यानन्द जी का एक वाक्य मैं हमेशा याद रखता हूँ, 'संसार में कोई शोरगुल नहीं और हिमालय में कोई शान्ति नहीं है।' एकान्त में कोई शान्ति नहीं और कोलाहल में कोई बाधा नहीं है, ये दोनों प्रत्येक व्यक्ति के भीतर विद्यमान हैं। यदि व्यक्ति स्वयं शान्त नहीं है तो वह संसार के किसी सुनसान कोने में भी शान्ति प्राप्त नहीं कर सकता, और यदि वह भीतर से शान्त है तो बीच बाजार में भी वह पूर्णतः शान्त रहेगा।

जीवन में शान्ति पाने के लिए आप सभी अत्यधिक व्याकुल हैं। आप सब तरफ शान्ति को खोजते हैं, परन्तु आपने कभी उस विक्षेप का कारण ढूँढ़ने का प्रयास नहीं किया जो आपको शान्ति का अनुभव नहीं करने देता। आपको पहले अशान्ति का कारण जानना चाहिए। जब आप कारण जान

लेते हैं तो समाधान ढूँढ़ना और शान्ति प्राप्त करना आसान हो जाता है। इसलिए आप सबको मेरी यह सलाह है कि कारण को खोजें, और तब आपको समस्या का हल मिल जाएगा। जीवन में आसान समाधानों की आशा न रखें। आपको चुनाव करने होंगे, निर्णय लेने होंगे जो आपके विकास के लिए सहायक हों और साथ ही दूसरों के उत्थान में भी सहायक हों। भीतर से गहन परिवर्तन लाने का यही एक रास्ता है।

जैसी प्रभु की इच्छा

जीवन में हम जो भी करें, साथ ही एक उच्च सत्ता के विधान की भी सजगता होनी चाहिए। ‘सकले तोमार इच्छा’ – यही उस उच्च सत्ता के विधान को अनुभव करने का सही भाव है। यह हमारे जीवन का एक महत्वपूर्ण पक्ष है। जीवन की वास्तविकताओं को समझना होगा। यदि हम अपनी आँखें बन्द रखना चाहें और संसार की वास्तविकता को न देखें तो यह हमारी मर्जी है, लेकिन अगर हम उन्हें खुला रख सकें और संसार की सुन्दरता देख सकें तो हम शान्त रह पायेंगे।

इस संदर्भ में यह भी आवश्यक है कि हम उस सत्ता को जानें जो हमारे जीवन का मार्गदर्शन करती है, जो हमारे जीवन रूपी वृक्ष के मूल का पोषण करती है। जड़ें अपने आप पेड़ को जीवित नहीं रख सकतीं। वे अपने इर्द-गिर्द से पोषक तत्वों को ग्रहण करती हैं। उसी प्रकार हम एक अन्य स्रोत से पोषक तत्वों को प्राप्त करते हैं और लोगों ने उस स्रोत को अलग-अलग नाम दिये हैं। हमें इन विभिन्न नामों से विशेष मतलब नहीं, परन्तु निश्चित रूप से हममें यह सजगता होनी चाहिए कि हम आध्यात्मिक चेतना के स्रोत से ही बल, प्रेरणा और शक्ति प्राप्त करते हैं। तभी हम जीवन में वास्तविक संतोष प्राप्त कर सकते हैं।

मानवीय प्रतिभाओं और क्षमताओं का एक सुन्दर समन्वय होता है। शरीर की क्षमताएँ मन की क्षमताओं के साथ मिल जाती हैं, और मन की क्षमताएँ आत्मा के साथ। तब हम पूर्ण हो जाते हैं और यही मानव जीवन का उद्देश्य है। जब हम इस पूर्णता का अनुभव करना आरम्भ करते हैं तब हमारी मनोवृत्तियाँ, दृष्टिकोण, कर्म, संवेदनशीलता और हमारा पूरा जीवन परिवर्तित हो जाता है।



अन्तरंग योग

मनुष्यों के रूप में हम निर्बल प्राणी हैं। हमारे जीवन में वह सार तत्त्व कहाँ है जो हमारे व्यक्तित्व के आन्तरिक, अटल स्वभाव की गहन जानकारी दे? हम प्रसन्न, न्यायप्रिय, संतुष्ट, गुणवान्, धर्म-परायण हो सकते हैं, परन्तु वह हमारे व्यक्तित्व के गहन, स्थायी पक्ष को प्रदर्शित नहीं करता। वह केवल हमारे व्यवहारात्मक पक्ष को दर्शाता है।

व्यक्तित्व के विभिन्न आयाम

प्रत्येक व्यक्तित्व के विविध आयाम होते हैं। व्यक्तित्व के प्रथम आयाम का सम्बन्ध हमारी अभिव्यक्ति से है, हम दूसरों के समक्ष स्वयं को कैसे प्रस्तुत करते हैं। जब आप किसी की ओर देखते हैं, आप हमेशा अपना बेहतरीन व्यवहार दर्शाने की कोशिश करते हैं। आप हमेशा मुस्कराते हैं, आप तयोरियाँ नहीं चड़ा सकते। जब आप किसी के साथ होते हैं तो आपको अच्छा दिखने का प्रयास करना पड़ता है, भले ही आपके घर में परेशानियों का बवाल उठा हो। यह पहला आयाम अहंकार, पद, प्रतिष्ठा, मित्रता एवं कामनाओं द्वारा नियन्त्रित होता है।

व्यक्तित्व का दूसरा आयाम दर्शाता है कि आप अपने दृष्टिकोण, विचारों, मनोभावों, श्रद्धा, विश्वास और भक्ति में कितने स्थिर हैं। स्थिरता और अस्थिरता के इस दूसरे आयाम का सम्बन्ध मनोवृत्तियों के नियन्त्रण से है। आपके मन में जो चल रहा है, उसके प्रति आप कितने सतर्क और सजग हैं।

सरलता और सहजता व्यक्तित्व का एक अन्य आयाम है। यह संसार के जाल से मुक्त करके सीधे आत्मा, दिव्यता और ईश्वर के अनुभव की ओर ले जाता है। इसलिए आध्यात्मिक साधकों को यह मार्गदर्शन दिया जाता है कि जितना हो सके, सरल, मासूम और सहज रहें, परन्तु विवेक के साथ। भिन्न परिस्थितियों में भिन्न प्रतिक्रिया होनी चाहिए। योग सूत्रों में कहा गया है –

मैत्रीकरुणामुदितोपेक्षाणां सुखदुःखपुण्यापुण्याविषयाणां भावनातः
चित्तप्रसादनम् ॥1.33॥

अर्थात् जो प्रसन्न हों उनके साथ मित्रवत् व्यवहार करो। जो दुःखी हों, उनके प्रति दयालु रहो। जो सद्गुणी हों उनके लिए प्रसन्न रहो और जो कपटी हैं उनके प्रति उदासीन रहो।

एक योगी को प्रसन्न और संतुष्ट लोगों के प्रति मैत्री भाव रखना चाहिए। सामान्यतः हम ऐसे लोगों से अपनी तुलना करते हैं और उनसे ईर्ष्या होती है। ईर्ष्या क्यों, मित्रता क्यों नहीं? उनके लिए भी हम प्रसन्न क्यों नहीं हो सकते? आगे कहा है कि दुःखी लोगों के प्रति करुणा का भाव रखो। हमारे जीवन में इसके विपरीत होता है। यदि हम किसी को अपना प्रतिद्वन्द्वी समझते हैं तो उसे दुःखी देखकर खुश होते हैं। हम सोचते हैं, ‘अच्छा है, ईश्वर उन्हें दण्ड दे रहा

है। काश उन्हें और दण्ड मिले।' हम अपने प्रतिद्वन्द्वी के दुःख के क्षण में करुणा का भाव क्यों नहीं रख सकते? यह सम्भव है। योग सूत्र हमें मैत्री, करुणा और मुदिता के साथ एक भिन्न स्वभाव विकसित करने की शिक्षा देते हैं।

‘जो सद्गुणी हैं, उनके प्रति प्रसन्नता का भाव रखें’ – सद्गुण का सामाजिक, व्यक्तिगत और आध्यात्मिक पक्ष क्या है? आखिर हम समाज में रहते हैं एवं सामाजिक और व्यक्तिगत सद्गुणों की पहचान रखते हैं। आध्यात्मिक सद्गुणों का उदाहरण प्रस्तुत करने के लिए हमारे सामने महान् साधु-संन्यासी और श्री राम जैसे नायक हैं।

सूत्र का अन्तिम भाग है, कपटी लोगों की उपेक्षा करो। कपटी की उपेक्षा कैसे की जा सकती है? यह सम्भव नहीं, क्योंकि उनका अस्तित्व हमेशा रहता है। परन्तु जब हम कपटियों की संगति में होते हैं तो निश्चित रूप से उस नकारात्मक भाव से ऊपर उठ सकते हैं जो उस समय हमारे मन में आता है। हम अपना संतुलन बनाए रख सकते हैं।

अपने मनोभाव को सशक्त बनाओ

इस प्रकार हम अपने व्यक्तित्व के स्थिर पक्ष का विकास करते हैं। आरम्भ से अन्त तक योग का यही उद्देश्य रहा है। हमारा योग का ज्ञान गहन नहीं है। इसलिए हम योग को आसन और प्राणायाम तक सीमित रखते हैं और सोचते हैं कि आठ घंटे ध्यान करना, इतने घंटे आसन-प्राणायाम करना, इतने घंटे मंत्र जप करना ही इसका उद्देश्य है। हम सोचते हैं जितना अधिक हम करेंगे, उतने उन्नत साधक बनेंगे, जबकि यह सच नहीं है।

इस सन्दर्भ में हम जो भी कहते हैं उसे बहुत ध्यान से कहना चाहिए। अगर हम बहुत जोर देकर कहें कि आसन-प्राणायाम-ध्यान केवल तैयारी के अभ्यास हैं तो कोई भी व्यवस्थित ढंग से योग का अभ्यास नहीं करेगा। अपने में बदलाव लाने और अपनी सीमाओं से ऊपर उठने के लिए ये प्रारम्भिक प्रयास आवश्यक हैं। इसलिए हम कहते हैं, ‘ठीक है, योग का अभ्यास जारी रखो। इस आसन, इस प्राणायाम, इस ध्यान का अभ्यास करो, यह आपकी साधना है।’ लोग केवल इतने से सन्तुष्ट और प्रसन्न हो जाते हैं, जबकि वास्तविकता यह है कि पचास आसन हमें शारीरिक स्तर पर भले ही सबल बनायें, लेकिन मन के स्तर पर कुछ नहीं होगा। आठ घंटे का ध्यान केवल

हमें यह सन्तुष्टि देगा कि, 'ध्यान के समय मैं अपनी आत्मा और ईश्वर के निकट था,' पर जब हम आँखें खोलते हैं तो संसार से जुड़ते हैं और ईश्वर के साथ विच्छेद हो जाता है। आठ घंटे का ध्यान मन में बुनियादी तौर पर कोई परिवर्तन नहीं लाता। इस तरह के योगाभ्यास उन खूटियों की तरह है जिनसे हम किसी जंगली जानवर को चुप कराने के लिये कुछ समय बाँध देते हैं।

योग कक्षा में किये गये योगाभ्यासों के अतिरिक्त एक अन्य प्रकार के योग का भी अभ्यास होना चाहिए। न तो यह हठयोग है, न ही राजयोग, कर्मयोग, भक्तियोग, क्रियायोग या कुण्डलिनी योग, बल्कि यह दृष्टिकोण और मनोभाव में परिवर्तन लाने वाला अंतरंग योग है – मन में जो हो रहा है उसकी सजगता, उस प्रक्रिया का निरीक्षण और रूपान्तरण, उन सीमाओं पर विजय प्राप्त करना जो हमारे दिन-प्रतिदिन की अभिव्यक्तियों में बाधा उत्पन्न करती हैं। यह तभी हो सकता है जब हम अत्यधिक सतर्क हों। केवल सतर्क नहीं, बल्कि अत्यधिक सतर्क।

अभी आप का ध्यान और सजगता खण्डित है। जब आप यह निर्देश सुनते हैं कि 'सजग हो जाइए' तो आप किसके प्रति सजग बनते हैं? एक प्रयोग करके देखिये। इसी क्षण हर चीज के प्रति सजग बन जाइए। आप किसके प्रति सजग बने हैं? कुछ भी तो नहीं। आप कह सकते हैं, 'मैं शरीर को देख रहा हूँ,' परन्तु वह सजगता भी अपूर्ण है, क्योंकि आप अपनी हृदयगति, अपने पलकों के झपकने या शिराओं व धमनियों में रक्त-प्रवाह के प्रति सजग नहीं हैं। शरीर की सजगता पूर्ण नहीं है।

यदि शिक्षक कहता है, 'अपने मन के प्रति सजग बनिए' तो मन के किस पक्ष के प्रति आप सजग बनते हैं? मन की केवल ऊपरी सतह, उससे अधिक नहीं। सजगता आपके व्यक्तित्व का सबसे खण्डित पक्ष है, इसमें कोई संदेह नहीं। आपकी सजगता एक 'जिगसॉ पहेली' की तरह है जिसके सभी टुकड़े एक साथ मिले हुए हैं। जब शिक्षक कहता है, 'सजग बन जाइए,' आप पहेली के एक टुकड़े को उठाकर उसकी ओर देखते हैं, फिर दूसरा टुकड़ा उठाते हैं और उसे जमाने का प्रयास करते हैं। बस इतना ही कर पाते हैं, कभी पूर्ण चित्र नहीं बना पाते।

अन्तरंग योग में जिगसॉ पहेली के टुकड़ों को एक साथ जमाकर पूर्ण चित्र को देखने का प्रयास किया जाता है। इसमें समय लगता है। ईश्वर दर्शन

प्राथमिकता नहीं है, बल्कि सीमाओं से घिरी जीवात्मा का प्रशिक्षण ज्यादा जरूरी है। एक अन्धे व्यक्ति के लिए दृष्टि पुनः प्राप्त करना महत्वपूर्ण है, न कि सूर्य की एक झलक पाना। हमलोग हमेशा कहते हैं, ‘काश मैं सूर्य को देख पाता।’ हमारे पास आँखें ही नहीं हैं और हम सूर्य देखने का प्रयास कर रहे हैं!

हमलोगों को अस्पताल जाने का प्रयास करना चाहिए जहाँ हम नेत्रों पर शल्य-क्रिया करवाकर नयी दृष्टि प्राप्त कर सकें। योग, ध्यान और यह अन्तरंग योग वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा हमें दृष्टि प्राप्त हो सकती है। सुनने में यह सरल लगता है, परन्तु इस साधना में अनेक जन्म लग सकते हैं। हममें से किसी में भी कुछ वर्षों अथवा एक जीवनकाल में भी इसे सिद्ध करने की क्षमता नहीं है।

इन क्षमताओं का स्वाभाविक ढंग से विकास होना चाहिए। दृढ़ निश्चय कीजिये, अपनी संकल्प शक्ति का प्रयोग करते हुए कहिये, ‘मैं अपना लक्ष्य अवश्य प्राप्त करूँगा।’ खरगोश और कछुए की दौड़ में कछुआ अपनी रफ्तार से लगातार चलता रहा और अन्त में जीत उसी की हुई।

मन के साथ मित्रता

योग का मानसिक पक्ष संभवतः सबसे महत्वपूर्ण है। मानव मन हमेशा से एक रहस्य रहा है। मन कैसे अपना कार्य करता है, कैसे अन्य लोगों और वातावरण से व्यवहार करता है? मन कैसे विवेक प्राप्त करता है और कैसे आत्मा का साक्षात्कार करता है? इन प्रश्नों के कोई निश्चित उत्तर नहीं हैं, केवल खोज की निरन्तर प्रक्रिया है।

अपने जीवन में हम निश्चित रूप से देख सकते हैं कि मन हमारी अभिव्यक्तियों और व्यवहार में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। किन्तु हम मन को किस प्रकार प्रशिक्षित करें? हम योग के द्वारा मन की क्षमता को किस प्रकार जाग्रत करें? योग का बौद्धिक अध्ययन करने वाले लोग कहते हैं कि मन को नियंत्रित करना आवश्यक है, परन्तु जो लोग योग का अभ्यास करते हैं वे कहते हैं कि मन के साथ मित्रता करना जरूरी है।

एक बार एक राजा को चार सुन्दर जंगली घोड़े दिये गये, जिन पर कोई सवारी नहीं कर सकता था। राजा ने ऐलान किया कि जो व्यक्ति इन घोड़ों को प्रशिक्षित कर सकेगा उसके साथ अपनी बेटी का विवाह कर देगा और उसे बहुत ईनाम भी देगा। बहुत-से अश्व-प्रशिक्षकों ने प्रयास किया परन्तु

असफल रहे। एक दिन, एक आदमी आया और बोला, 'मैं घोड़ों को इस शर्त पर प्रशिक्षित कर सकता हूँ कि उन्हें एक वर्ष तक स्वतन्त्र छोड़ दिया जाए।' एक वर्ष बाद वह एक घोड़े पर सवार होकर वापस आया। बाकी तीन घोड़े उसके पीछे-पीछे चल रहे थे।



जब राजा ने उसकी सफलता का रहस्य पूछा तो उस व्यक्ति ने उत्तर दिया कि उसने केवल घोड़ों से मित्रता की और उन्हें खुला छोड़ दिया। जब वे दौड़ते, वह भी उनके साथ दौड़ता। जब वे रुक जाते, वह भी रुक जाता। जब वे खाते थे, वह भी खाता था। अन्ततः घोड़ों ने उसे छूने दिया और धीरे-धीरे उन पर सवारी करने दी। घोड़ों से मित्रता कर लेने पर उन्हें उस पर विश्वास हो गया और उसे स्वीकार कर लिया।

जब आप स्वयं के मित्र बन जाते हैं तब मन को पीड़ित करने वाले भय, असुरक्षा, चिन्ता और तनाव को दूर करना आरम्भ कर देते हैं और मन को बेहतर तरीके से दिशान्तरित कर पाते हैं। सम्राट् सिकन्दर को जब ऐसा घोड़ा दिया गया जो अपनी ही परछाई से डरता था और किसी को उस पर सवार नहीं होने देता था तो उसने क्या किया? सिकन्दर ने घोड़े को मात्र दूसरी तरफ घुमा दिया। जब घोड़ा अपनी परछाई को नहीं देख पाया और भयभीत नहीं हुआ तो उसने सिकन्दर को उस पर सवार होने दिया।

यह संकेत देता है कि हमें अपने को जानना है। हमें मन को दिशा देने के पूर्व उसके भय और असुरक्षा को बाहर निकालना है। लेकिन ध्यान एक बृहत् विषय है जिसके अनेक आयाम हैं, इसलिए कहानी यह भी संकेत देती है कि हमें सम्पूर्ण मन का प्रबन्धन करना है। हमें मन के चारों पक्षों के साथ मित्रता करने की आवश्यकता है – मनस्, बुद्धि, चित्त और अहंकार, तब हमें हर चुनौती में सफलता मिलेगी।

रोग से पूर्ण स्वास्थ्य की ओर

रोग का कारण अनसुलझी समस्याएँ हैं। समस्याओं का सम्बन्ध चाहे हमारे वातावरण से हो, समाज से हो, परिवार से हो या वे व्यक्तिगत हों, जब हम उन्हें सुलझाने में सक्षम नहीं होते तो उन अनसुलझी समस्याओं का प्रभाव बीमारी के रूप में प्रकट होता है। हमें यह सीखना होगा कि अपने व्यक्तित्व के विभिन्न स्तरों पर इन समस्याओं से कैसे निपटें और किस प्रकार उनका निराकरण करें। मनुष्यों पर उनकी आनुवांशिकी, परिस्थितियों, घटनाओं और वातावरण का प्रभाव भी पड़ता है, इसीलिए ऐसी परिस्थितियों में हमारी क्या क्रिया-प्रतिक्रिया होती है, इसकी सजगता का विकास करना भी आवश्यक है।

हम सभी हमेशा प्रतिक्रिया करते हैं, शायद ही कभी स्वाभाविक, समुचित क्रिया होती है। हमारी लोगों के प्रति प्रतिक्रिया होती है, उनकी वाणी पर हमारी प्रतिक्रिया होती है, अपने सुख-दुःख के प्रति प्रतिक्रिया होती है। हमारा पूरा जीवन सजगतापूर्वक क्रिया का चुनाव करने के बजाय विभिन्न परिस्थितियों में प्रतिक्रिया करता हुआ व्यतीत होता है। इस बिन्दु को याद रखना जरूरी है, क्योंकि इसी बिन्दु से हम अपने शरीर को अपने स्वभाव, मन और चेतना के साथ पुनः समस्वरित करने की प्रक्रिया आरम्भ करते हैं। पूर्ण स्वास्थ्य प्राप्त करने की ओर यह पहला कदम है।

आत्म-निरीक्षण और आत्म-समझ की प्रक्रिया से उत्तम स्वास्थ्य का अनुभव होता है। योग चिकित्सा का उद्देश्य मात्र रोग के लक्षणों को दूर करना नहीं है। योग चिकित्सा किसी बीमारी का उपचार करने की विधि नहीं है, बल्कि यह उस व्यक्ति का उपचार करने की विधि है जो एक विशेष परिस्थिति के कारण कष्ट पा रहा है। इसके लिए व्यक्ति को पहले अपने व्यक्तित्व के प्रति सजग बनाया जाता है ताकि वह देख सके कि व्यक्तित्व का बाह्य स्तर पर संसार के साथ और आन्तरिक स्तर पर चेतना के साथ कैसा व्यवहार होता है।

जब हम ऐसा कर पाते हैं तो हमारी आदतें और जीवनशैली परिवर्तित हो जाती है। हमारे मनोभाव और दृष्टिकोण बदल जाते हैं, हमें पूर्णता की अनुभूति होती है। पूर्णता की इस अनुभूति के साथ योग की यात्रा आरम्भ होती है। हम अपने जीवन को विकसित होता हुआ अनुभव करते हैं। हम योग दर्शन का वास्तविक अनुभव करना शुरू करते हैं।

योग दर्शन क्या है? संस्कृत में दर्शन का तात्पर्य देखने या अनुभूति प्राप्त करने से है। हम योग की अनुभूति कैसे प्राप्त करें? बुद्धि, भावना और कर्म – ये तीन मानवीय प्रतिभाएँ महत्त्वपूर्ण हैं और इनको संतुलित एवं समस्वरित करना आवश्यक है। यह योग दर्शन की शुरुआत है।

योग दर्शन की शुरुआत मानव शरीर में परम चेतना के अवतरण जैसे उच्च सैद्धान्तिक विचारों से नहीं होती, बल्कि उन गुणों की पहचान से होती है जो हमारे जीवन में अन्तर्निहित हैं, जिन्हें विकसित और समस्वरित किया जा सकता है। ये गुण बुद्धि, भावना और कर्म की प्रतिभाएँ हैं। जब हम अपने मन की विशेषताओं, क्रियाओं, प्रतिक्रियाओं और अभिव्यक्तियों को



देख पाते हैं, अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति को समझ पाते हैं तथा दूसरे व्यक्तियों और वातावरण के साथ अपने व्यवहार को जान पाते हैं, तब हमारा दृष्टिकोण अधिक व्यापक, पूर्ण और संतुलित बनता है। हम सकारात्मक समाधानों के लिए कार्य करते हैं। जीवन सृजनात्मक हो जाता है, क्योंकि हमारे विचार, भाव और कर्म स्पष्ट, समस्वरित एवं निर्दोष हो जाते हैं। जब हम इन तीन प्रतिभाओं को एक साथ ला पाते हैं तो योग दर्शन को जीना शुरू करते हैं।

जीवन का बागवान

बहुत बार मैं लोगों से सुनता हूँ कि व्यक्ति को योद्धा बनना चाहिए और जीवन-संग्राम जीतना चाहिए। मैं उनसे सहमत नहीं हूँ, क्योंकि एक योद्धा बहुतों का खून बहाकर जीतता है। एक योद्धा अन्य लोगों को दबाकर जीतता है और हम ऐसा नहीं चाहते।

हमें किसान बनना है, एक अच्छा बागवान बनना है। हमें एक बंजर भूमि का टुकड़ा दिया गया है और अपने पुरुषार्थ से उस क्षेत्र को एक सुन्दर उद्यान में बदलना है। उस उद्यान को तैयार करने से पहले हमें बहुत मेहनत करनी होगी। हमें कंकड़-पत्थरों को हटाना होगा, मोथों को निकालना

होगा, मिट्टी को जोतकर नरम करना होगा और फिर ठीक तरह से क्यारियाँ बनानी होंगी।

जब क्यारियों में पौधों के लिए खाद डल जाती है तब हम बीजारोपण करते हैं। इसके बाद बीजों का ख्याल भी रखना है, कहीं पशु-पक्षी उन्हें खोदकर बाहर न निकाल दें। इसी तरह हमारे मन और हृदय से भी पशु आध्यात्मिक बीज को खोदकर बाहर निकाल देते हैं। क्रोध एक पशु है, घृणा, मात्सर्य, लोभ और नकारात्मकता भी पशु हैं जो हमारी शान्ति और सामंजस्य में बाधा डालते हैं। ये उस बीज को अंकुरित नहीं होने देते।

यदि आप बीजों को रोपते हैं और कुछ जानवर उन्हें खोदकर बाहर निकाल देते हैं, तब आप क्या करेंगे? शायद आप अपनी बन्दूक उठाकर उन्हें गोली मारें। क्या वैसा ही आप अपने क्रोध, ईर्ष्या, घृणा और मात्सर्य के साथ कर सकते हैं? क्या आप अपनी नकारात्मक प्रवृत्तियों और मुखौटों को गोली से उड़ा सकते हैं? आप में अपने रोपे हुए बीज को संरक्षण प्रदान करने की क्षमता होनी चाहिए और तब तक उसकी देखभाल करनी चाहिए जब तक उसका एक वृक्ष के रूप में विकास नहीं हो जाता।

जिस प्रकार छोटे बच्चों को बचपन में संरक्षण और देखभाल की आवश्यकता होती है, लेकिन वयस्क होने पर स्वतन्त्र और स्वावलम्बी हो सकते हैं, उसी प्रकार आप अपने छोटे आध्यात्मिक बच्चे की परवरिश की प्रारम्भिक अवस्था में हैं। आप एक बच्चे को सर्दी, गर्मी, धूप और हवा से बचाते हैं। इसी प्रकार अपने आध्यात्मिक जीवन को राग-द्वेष से बचाइये और उसका स्वाभाविक ढंग से विकास होने दीजिये।

अनुशासन के द्वारा आप यह सुनिश्चित करते हैं कि पेड़ सीधा बड़े। कभी-कभी आपको कैचे के साथ चारों तरफ से पेड़ की काट-छाँट करनी पड़ती है। जब आपको लगे कि पेड़ की काट-छाँट के लिए कैचे की आवश्यकता है तो आश्रम आइये। हम आपको कैचा देंगे और बतायेंगे कि किस शाखा को काटने की आवश्यकता है। लेकिन संरक्षण और पोषण का जो सबसे महत्वपूर्ण कार्य है वह आपको हर समय करना होगा और तब आपका पुरुषार्थ एक दिन फल लायेगा।

आप अपने जीवन के बागवान बन सकते हैं और यह सुनिश्चित कर सकते हैं कि जो सुन्दर और सबसे अच्छा है, जो आशा और प्रसन्नता देने

वाला है, वही आपके उद्यान में स्थान पाता है। इस संकल्प के साथ जीवन बितायें कि आप स्वयं के बागवान बनेंगे। सबसे अच्छा किसान बनिये और अनेकों के साथ अपने पुरुषार्थ का फल साझा कीजिये, बहुतों के साथ जीवन की सुन्दरता और ऊर्जा को बाँटिये।

हरिः ॐ तत्सत्





योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित
© बिहार योग विद्यालय 2022